गुरुदेव और माताजी केवल कहने मात्र को ही दो हैं।

महाशक्ति की लोकयात्रा

गुरुदेव और माताजी केवल कहने मात्र को ही दो हैं।

योग साधना की परम प्रगाढ़ता में शिव और शक्ति का परस्पर अंतर्मिलन दो रूपों में प्रकट हुआ था। अपने पहले रूप में महायोगिनी माताजी की अंतस्थ कुण्डलिनी महाशक्ति परिपूर्ण जागरण के पश्चात् विभिन्न चक्रों का भेदन और प्रस्फुटन करती हुई सहस्रार में स्थित महाशिव से जा मिली थी। योग साधकों के लिए इस अद्भुत एवं दुर्लभ सत्य के घटित होने से माताजी का समूचा अस्तित्व योगेश्वर का भंडार बन गया था। योग की उच्चस्तरीय विभूतियां एवं सिद्धियां उनके व्यक्तित्व के विविध आयामों से अनायास प्रकट होने लगी थीं। शिव और

शक्ति में महामिलन का एक दूसरा रूप भी माताजी के जीवन में बड़ा ही स्पष्ट रीति से उजागर हुआ था। जिसकी चर्चा प्रायः किसी योगशास्त्र में नहीं मिलती। इस दूसरे रूप में शिवस्वरूप गुरुदेव की आत्मचेतना शक्तिस्वरूपा माताजी की आत्मचेतना से घुल-मिलकर एक हो गई थी। शिव और शक्ति के इस अद्भुत अंतर्मिलन का सत्य शिष्यों और भक्तों के साथ व्यवहार में जब-तब प्रकट होता रहता था।

इसी अंतर्मिलन को बल देते हुए कुछ तथ्य:

आने-जाने वाले, मिलने-जुलने वाले इस सचाई को अनुभव कर अचरज में पड़ जाते। उन्हें यह बात गहराई से महसूस होती कि गुरुदेव एवं माताजी

कहने भर के लिए दो हैं, पर वास्तव में उनके भीतर एक ही प्राण प्रवाह, एक ही भाव-चेतना क्रियाशील है। इस तरह की अनुभूति लोगों को लगभग रोज ही होती थी। वे आपस में इसकी चर्चा भी करते। एक दूसरे से बताते कि हमने यह बात तो गुरुजी को कही थी, लेकिन माताजी तक कैसे पहुंच गई ! जबकि गुरुजी तो अभी तपोभूमि में ही हैं अथवा ये बातें तो अखण्ड ज्योति संस्थान में माताजी से कही गई थीं। तपोभूमि में बैठे हुए गुरुदेव को किस तरह पता चल गईं! उन दिनों तो वहां कोई टेलीफोन जैसे माध्यम भी न थे, जिससे कि ये अनुमान लगाए जा सकते कि टेलीफोन द्वारा बात कह दी गई

होगी। बड़े ही तार्किक एवं बुद्धिकुशल लोगों को भी गुरुदेव एवं माताजी की आत्मचेतना के अंतर्मिलन का सत्य स्वीकारना पड़ता ।

कई बार तो कुछ लोग अपने अनुभव को दुहरा - तिहरा कर इसकी बाकायदा परीक्षा भी कर डालते।

महाराष्ट्र के विष्णु नारायण गोवरीकर जी की अनुभूति:

उन्हीं में से एक थे। ये गायत्री तपोभूमि के शिविरों में प्रायः आया करते थे। इस बार जब आए तब उनका मन कई तरह की घरेलू समस्याओं से आक्रांत था। मन को कितना भी समझाने की कोशिश करते,

पर बार-बार वह समस्याओं के जाल में जकड़ जाता। शिविर के दूसरे दिन जब वह खाना खाने के लिए अखण्ड ज्योति संस्थान गए, तब उनके मन की स्थिति कुछ ऐसी ही थी। वह अपने को कितना भी संभालने की कोशिश करते, पर उद्विग्नता किसी भी तरह मन को छोड़ नहीं रही थी।

इसी उद्विग्न मनःस्थिति में वह खाना खाने के लिए बैठे। माताजी ने स्वयं अपने हाथों से उन्हें खाना परोसा। खाना परोसते हुए अंतर्यामी मां ने उनकी मनोदशा पहचान ली। वह प्यार से बोलीं, “बेटा, अब तुम मेरे पास आ गए हो, तुम्हें परेशान होने की कोई जरूरत नहीं । तुम्हारी परेशानियों से हम लोग

निबटेंगे। तुम आराम से खाना खाओ।" माताजी के इस कथन का उन पर कोई खास असर नहीं हुआ। वह वैसे ही अन्यमनस्क भाव से खाना खाते रहे। विष्णु नारायण को इस तरह उदास देखकर माताजी कहने लगीं, "मैं जानती हूं बेटा, इस समय तुम पर भारी मुसीबतें हैं। खेती का मामला-मुकदमा चल रहा है। दुकान इस समय एकदम ठप पड़ी है। तुम्हारी पत्नी इस समय काफी बीमार है। बेटी की शादी के लिए कुछ ढंग का बंदोबस्त नहीं हो पा रहा है। इतनी परेशानियां किसी पर एक साथ आ पड़ें, तो किसी का भी घबरा जाना

स्वाभाविक है। पर मां के पास आकर भी उसके बच्चे चिंतित रहे, तो मां के होने का क्या फायदा?”

माताजी की इन बातों ने उन्हें अचरज में डाल दिया। सबसे बड़ा अचरज तो उनको इस बात का था कि उन्होंने तो अपनी समस्याएं किसी को भी नहीं बताईं। जब से वह यहां आए हैं, तब से लेकर इन क्षणों तक उन्होंने किसी से भी अपनी परेशानी की कोई चर्चा नहीं की। फिर भी माताजी को सारी बातें कैसे पता चलीं? प्रश्न के उत्तर में वे केवल इतना सोच सके कि माताजी केवल गुरुजी की धर्मपत्नी भर नहीं, वे जरूर योगसिद्ध महायोगिनी हैं। यही सोचकर उन्होंने निश्चिंतता से खाना खाया

और हाथ-मुंह धोकर माताजी को प्रणाम करके गायत्री तपोभूमि की ओर चल दिए। हां इतना अवश्य हुआ कि माताजी को प्रणाम करते हुए उनकी आंखें छलक आईं, पर मां की वरदायी अभयमुद्रा देखकर उनके मन को गहरी आश्वस्ति मिली।

लेकिन अभी जैसे उनके आश्चर्य की श्रृंखलाओं का अंत नहीं हुआ था। वह जैसे ही तपोभूमि आए, उन्होंने देखा कि गुरुजी यज्ञशाला के पास टहल रहे हैं। वह उन्हें प्रणाम करने के लिए गए। गुरुदेव को प्रणाम करके विष्णु नारायण जैसे ही खड़े हुए, गुरुदेव ने कहा, “बेटा, अब परेशान होने की कोई

जरूरत नहीं है। जब माताजी ने तुम्हारी सभी समस्याओं का भार अपने ऊपर ले लिया है, तब चिंता जैसी कोई बात नहीं है। तुम उन पर विश्वास करना। वह परम समर्थ हैं। उन्होंने कह दिया, तो विश्वास रखना, सब कुछ ठीक हो जाएगा।” गुरुजी की इन बातों ने विष्णु नारायण को एक बार फिर से हैरत में डाल दिया। वे सोच ही नहीं पाए कि अखण्ड ज्योति संस्थान में माताजी द्वारा कही गई बातें गुरुजी को कैसे पता चल गईं। उनकी इस हैरानी को दूर करते हुए गुरुजी ने कहा, “अरे बेटा, हम और माताजी कोई दो थोड़े ही हैं। बस केवल

बाहर से दिखने के लिए दो हैं। बाकी भीतर से सब कुछ एक है।"

गुरुजी की बातों ने उन्हें और भी चकित कर दिया। उनकी बातों पर भरोसा करने के अलावा और कोई दूसरा उपाय न था। लेकिन मानवीय मन का संदेह अभी भी किसी कोने में छिपा हुआ था। इस संदेह का निवारण करने के लिए वे शिविर के सारे दिनों में कोई-न-कोई प्रयास करते रहे। हर बार उनके संदेह को मुंह की खानी पड़ी। जो गुरुदेव हैं वही माताजी हैं, जो माताजी हैं वही गुरुदेव हैं, यही सत्य प्रमाणित हुआ। अपनी इन बातों की चर्चा जब उन्होंने साथ के शिविरार्थियों से की, तो वे सब

खुलकर हंस पड़े। हंसी का कारण पूछने पर उनमें से सभी ने कहा, “अरे भई, यह भी कोई सोच-विचार की बात है। हम तो पहले से ही जानते हैं कि गुरुजी-माताजी को दो समझना एक बड़ा भ्रम है। वे दोनों एक ही हैं।" इन सबकी बातों को सुनकर विष्णु नारायण का संदेह दूर हुआ। घर वापस पहुंचने पर माताजी के प्रति उनकी श्रद्धा शतगुणित हो गई, क्योंकि उन्होंने अनुभव किया कि अप्रत्याशित संयोगों से उनकी सभी समस्याएं एक के बाद एक निबटती जा रही हैं। घर-परिवार किसी दैवी शक्ति के प्रभाव से अनायास ही सुव्यवस्थित हो गया।

अपने इस अनुभव को उन्होंने गुरुदेव को लिखे गए पत्र में बयान किया जिसे उन दिनों कई लोगों ने पढ़ा। विष्णु नारायण गोवरीकर जैसे अनेकों और भी हैं जिन्होंने माताजी की कृपा को अनुभव करने के साथ इस सचाई को जाना कि गुरुजी और माताजी एक ही आत्मचेतना के दो रूप हैं।

शिवरानी देवी की अनुभूति:

मध्यप्रदेश के ग्रामीण अंचल की एक महिला भक्त शिवरानी देवी की अनुभूति इस संबंध में बड़ी प्रगाढ़ थी। अल्पशिक्षित यह महिला भक्त कुछ खास पढ़ी-लिखी न होने पर भी बड़ी साधनापरायण थी। ब्रह्ममुहूर्त से लेकर प्रातः तीन घंटे नियमित साधना

करने का उनका बड़ा पक्का नियम था। गायत्री महामंत्र के प्रत्येक अक्षर को वह बड़ी भावपूर्ण रीति से जपती थी। उसके आचार-व्यवहार में भी बड़ी असाधारण पवित्रता थी। जपकाल के अलावा दिन के अन्य समय गृहकार्यों को करते हुए भी वह गायत्री मंत्र का मानसिक जप और सूर्यमंडलस्थ माता गायत्री का ध्यान किया करती थी। अपनी नियमित साधना में एक दिन उनका मन गहरे ध्यान में लीन हो गया। प्रगाढ़ ध्यान की इसी भावदशा में उन्होंने देखा कि सूर्यमंडलस्थ माता गायत्री ने माताजी का रूप ले लिया है। निरभ्र अनंत आकाश में केवल माताजी की तेजोमयी मूर्ति

विराजमान है। अखिल ब्रह्मांड के सारे ग्रह-नक्षत्र उन्हीं के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहे हैं। धीरे-धीरे सब कुछ उनमें विलीन हो जाता है। देखते-देखते परमपूज्य गुरुदेव की दिव्य मूर्ति भी उसी प्रकाश से निकलती दिखाई देती है। फिर दोनों साथ दिखाई देते हैं। ध्यान से उठने पर भी उनके मन पर यही विचित्र अनुभूति छाई रही। हालांकि इसका अर्थ उन्हें ज़रा भी समझ में नहीं आया। काफी दिनों बाद गायत्री तपोभूमि में एक शिविर में पहुंचने पर उन्होंने परमपूज्य गुरुदेव से इसकी चर्चा की। उत्तर में उनने गंभीरता से कहा,

“बेटी! शक्तिस्वरूपा आद्यशक्ति मां ही इस सृष्टि की जननी हैं। उनके कई रूप हैं। जैसी हमारी भावना होती है वैसी ही आकृति बन जाती है। वैसे माताजी के बारे में तुम्हारे जो भाव हैं, वे सही हैं। मैं उनसे जरा भी अलग नहीं हूं, उनका ध्यान करना अर्थात् गुरुसत्ता से, ऋषियुग्म से एकाकार होना । इस भाव को और प्रगाढ़ बनाते चलना।”

गुरुदेव के ये गूढ़ आध्यात्मिक वचनों का रहस्य उसे पता नहीं कितना समझ में आया लेकिन उसको अपने मन की गहराई में महाशक्ति की संचालन सामर्थ्य का अहसास अवश्य हुआ।

गुरुदेव की हिमालय यात्रा के दौरान कार्यकर्ताओं की शंकाएं :

महाशक्ति की संचालन सामर्थ्य का लौकिक प्राकट्य परमपूज्य गुरुदेव की दूसरी हिमालय यात्रा (1960-61) के समय हुआ । यह यात्रा पहली बार की तुलना में बहुत ही महत्वपूर्ण थी क्योंकि पहले बार के समय में गायत्री तपोभूमि के क्रिया-कलापों का कोई विशेष विस्तार न हुआ था। सारे काम-काज का केंद्र घीआ मंडी स्थित अखण्ड ज्योति संस्थान ही था। हर महीने निश्चित समय पर अखण्ड ज्योति के प्रकाशन के अलावा दूसरी कोई विशेष ज़िम्मेदारी न थी । मिशन का प्रचार-प्रसार

भी कुछ अधिक नहीं था जिसके कारण आगंतुकजन भी थोड़े ही थे। अब की बार की हिमालय यात्रा की स्थितियां एकदम अलग थीं। सन् 1953 में गायत्री तपोभूमि का निर्माण होने और यहां शिविरों की नियमित प्रक्रिया चल पड़ने से श्रद्धालुओं एवं जिज्ञासुओं के आवागमन का तांता सा लग गया था। वर्ष 1958 के सहस्त्र कुंडीय यज्ञ आयोजन ने भी स्थिति को एकदम बदल दिया था। इस यज्ञ आयोजन से देश के बहुसंख्यक बुद्धिजीवी, साधक, राजनेता व विशिष्टजन गुरुदेव के दैवी स्वरूप से काफी कुछ परिचित हो गए थे। इनमें से किसी-न-किसी का प्रायः प्रतिदिन मथुरा आना लगा

रहता था। स्थितियों के इस बहुआयामी परिवर्तन के बाद मिशन में "समर्थ संचालक" की ज़रुरत हर पल, हर क्षण अनुभव की जा रही थी। गुरुदेव के अभाव में उन्हीं की तरह समस्त दायित्व को निभाने की ज़िम्मेदारी माताजी पर ही थी। इस बारे में उन दिनों कई कार्यकर्त्ताओं के मन में काफी आशंकाएं-कुशंकाएं उभर रही थीं। यह सब कार्यकर्ता सोच ही नहीं सकते थे कि इतनी सीधी-सादी, सरल गृहिणी की भांति जीवनयापन करने वाली माताजी इतने बड़े एवं विस्तृत दायित्व को निभा पाएंगीं । वोह माताजी के भावपक्ष से परिचित होने के बावजूद उनकी बुद्धि

कुशलता एवं लोक व्यवहार में दक्षता से प्रायः अपरिचित थे। आपस में इनकी चर्चाएं बड़ी निराशाजनक एवं हताशा भरी होती थीं। कभी तो ये कहते कि गुरुदेव के जाने के बाद मिशन बिखर जाएगा, कभी कहते, गुरुदेव का इस तरह माताजी के हाथों में सब कुछ छोड़कर हिमालय जाना ठीक नहीं है। सबको खाना खिला देना अलग बात है लेकिन इतने बड़े संगठन को ठीक तरह से चलाना एकदम अलग बात है।

माता जी का सामर्थ्य :

हिमालय यात्रा पर जाने से कुछ समय पहले इस तरह की चर्चाएं गुरुदेव के कानों में पड़ीं, उन्होंने मुस्कराते हुए कहा,

“शंका-कुशंका करने वाले भला माताजी के बारे में जानते ही क्या हैं? उन्हें क्या मालूम माताजी कौन हैं? उनकी सामर्थ्य क्या है? अपनी शक्ति सामर्थ्य के एक अंश से सबको समर्थ बनाने वाली माताजी को मैं अच्छी तरह से जानता हूं।"

माताजी के दिव्य स्वरूप एवं उनकी दैवी क्षमताओं से अच्छी तरह परिचित गुरुदेव ने बड़ी

निश्चिंततापूर्वक हिमालय के लिए प्रस्थान किया। गुरुदेव के हिमालय चले जाने के बाद माताजी ने मिशन का सारा सूत्र संचालन अपने हाथों में ले लिया। उन दिनों उन पर घर-परिवार की जिम्मेदारियां भी बहुत थीं। बच्चों की पढ़ाई चल रही थी, उनसे तो किसी विशेष सहायता की आशा न थी। अपने अकेले के दम पर ही उन्हें साधना, गृहकार्य, पत्र-लेखन, अखण्ड ज्योति पत्रिका का संपादन-प्रकाशन, गायत्री तपोभूमि के कार्यों की देखभाल करनी थी। यह ठीक है कि इन सभी कार्यों में सहयोग के लिए कार्यकर्त्ता थे लेकिन वे सब-के-सब सहयोगी नहीं थे। माताजी के दैवी स्वरूप के

प्रति अनभिज्ञता एवं श्रद्धा-भक्ति के अभाव में इनमें से कुछ की मनःस्थिति बड़ी दुःखित हो गई थी।अपनी मानसिक विपन्नता के वश हो, ये कभी-कभी उल्टे सीधे काम भी कर बैठते थे। परस्पर सहयोग से रहने की बजाय शत्रुता के बीज बोने में भी कोई कसर न छोड़ते।

अपने आराध्य के प्रति परिपूर्ण निष्ठा के साथ माताजी दिन-रात काम में लगी रहती थीं। घर और मिशन के अनेक तरह के कार्यों के अलावा उन पर कष्टपीड़ित शिष्यों-भक्तों की आध्यात्मिक शक्ति से सहायता करने की जिम्मेदारी भी थी। वे कब-कब, क्या-क्या करती हैं, इसे उनके पास रहने वाले लोग

भी ठीक तरह् से समझ न पाते थे। सभी को बस इतना पता चल जाता कि सारे काम सुचारु ढंग से और सही समय से हो रहे हैं। माताजी के इस दैवी संचालन से वे अल्प बुद्धि लोग तो बहुत हतप्रभ होते थे, जो सहयोग की आड़ में विरोध और विरोध के कुचक्र रचते रहते थे। माताजी उनकी इन षड्यंत्र भरी गतिविधियों से अनजान न थीं लेकिन उनका अपनी इन बुद्धिहीन संतानों के प्रति करुणा भाव था। इन कुपुत्रों के प्रति भी मां के वात्सल्य में कोई कमी न आई थी।

कार्यकर्ताओं के बीच झगड़ा:

एक बार इन्हीं दिनों गायत्री तपोभूमि में कार्यकर्त्ताओं के बीच झगड़ा हो गया। इस व्यर्थ के झगड़े को सुलझाने के लिए माताजी को हस्तक्षेप करना पड़ा। माताजी ने सभी लोगों को एक जगह इकट्ठा किया गया। सब के ठीक तरह से बैठ जाने के बाद उन्होंने कहना शुरू किया :

“बेटा! मैं तुममें से हर एक को बहुत अच्छी तरह से जानती हूँ । मैं इस भीड़ में किसी का नाम लेकर उसे शर्मिंदा तो नहीं करूंगी लेकिन तुम में से जिसने जो कुछ किया उसके कामों का खुलासा कर

देती हूँ । उसी से तुम्हें यह अन्दाजा लग जाएगा कि मुझे क्या कुछ मालूम है।”

इसी के साथ माताजी ने बिना नाम लिए हर एक कार्यकर्त्ता की गड़बड़ियों को गिनाना शुरू कर दिया। आर्थिक गड़बड़ियों के साथ विरोध के कुचक्रों का एक-एक करके खुलासा करने लगीं। जैसे-जैसे वह बोलती जातीं सुनने वालों का सिर शर्म से झुकता जाता। सब कुछ कह चुकने के बाद उन्होंने कहा,

"बेटा, अब तक मैं चुप थी इसका कारण यह नहीं है कि मुझे कुछ भी मालूम नहीं था। कारण केवल इतना ही था कि मैं मां हूं और मां हर हाल में अपने

बच्चों को प्यार करती है। फिर वे बच्चे कैसे भी क्यों न हों। रही मिशन की बात, इसे तो भगवान् ने जन्म दिया है। वही इसे बढ़ा रहे हैं । चाहे जितने भी लोग, जितनी भी तरह से स्वार्थवश या अपनी कुटिलता के कारण इसका विरोध करें, पर इसे तो हर हाल में आगे बढ़ना ही है।"

माताजी की बातों को सुनकर, सुनने वाले अवाक् रह गए। उनमें से जिनकी भावनाएं अभी पूरी तरह से मरी नहीं थीं, जो किसी कारण बहकावे में आकर भटक गए थे, उन्होंने रोते हुए माताजी के चरणों में गिरकर माफी मांगी। मां ने भी प्यार से अपने इन अज्ञानी बालकों के सिर पर हाथ फेरकर क्षमा कर

दिया लेकिन कुछ के मन में कलुष अभी बाकी था। उन्होंने पहले तो यह पता करने की कोशिश की कि माताजी को सारी बातें कहां से पता चलीं। जब अपनी इस कोशिश में सब तरह से थक-हार गए, तब उन्हें भी माताजी की दिव्य क्षमताओं पर विश्वास करना पड़ा। हालांकि इसके बावजूद वे अपनी प्रवृत्ति को बदलने के लिए तैयार नहीं हुए। उन्होंने अपनी कारगुजारियां जारी रखीं, पर महाशक्ति की संचालन सामर्थ्य से मिशन की संपूर्ण गतिविधियां सुनियोजित एवं सुनियंत्रित रीति से चलती रहीं। इसी बीच गुरुदेव की हिमालय यात्रा की अवधि भी पूरी हुई। वह निश्चित समय पर

वापस आए। उनके आते ही माताजी ने संचालन सूत्र फिर से उनके हाथों में सौंप दिया। अंतर्यामी गुरुदेव को बिना बताए ही सारी स्थितियां पता चल गईं और उन्होंने दोषीजनों के प्रति कठोर कार्यवाही करने का निश्चय किया लेकिन यहां भी मां की ममता आड़े आ गई। उन्होंने गुरुदेव से कहा, “अब रहने भी दीजिए, वे जैसे हैं, मेरे बच्चे हैं।” जब गुरुदेव ने मिशन के भावी विस्तार का हवाला देकर उन्हें बहुत समझाया, तो वे जैसे-तैसे किसी तरह बहुत दुःखी मन से राजी हुईं, पर यहां भी उन्होंने अपनी शर्त रख दी। वे बोलीं कि उन्हें नया जीवन शुरू करने के लिए पर्याप्त धनराशि एवं आपके

द्वारा लिखे गए मौलिक एवं untranslated साहित्य के प्रकाशन का अधिकार दें। उनकी इन बातों पर गुरुदेव हंस पड़े और कहने लगे,

“आपकी ममता के सामने तो त्रिलोक के स्वामी को भी झुकना पड़ेगा। फिर मेरी क्या मज़ाल । आप जैसा चाहती हैं, वैसा ही होगा।”

सब कुछ माताजी की सहज संवेदनाओं के अनुसार ही हुआ। जिन आत्मदानियों को अलग किया गया, वे अपने हृदय में माताजी के असीम प्यार की अनुभूति लेकर गए। माताजी की दिव्य शक्तियों और गुरुदेव के तपः तेज ने मिशन को फिर से नए प्राण दिए। बीतते वर्षों के साथ महाशक्ति के दिव्य

साधना स्थल के रूप शांतिकुंज की पृष्ठभूमि बनने लगी।